विक्रम की उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली गद्य की एकसाथ प्रतिष्ठा करनेवालों के चार लेखकों का नाम महत्वपूर्ण है — प्रतिष्ठा करने वाले चार सज्जन ये हैं —

1. मुंशी सदासुखलाल
2. इंशा अल्ला खाँ,
3. लल्लू लाल
4. सदल मिश्र

ये चारो लेखक संवत् 1860 के आसपास हुए।

1. मुंशी सदासुखलाल — उन्होंने श्रीमद्भागवत का अनुवाद "सुखसागर" नाम से खड़ी बोली में किया।

2. इंशा अल्ला खाँ — ये उर्दू के बहुत प्रसिद्ध शायर थे। इंशा के "उदयभानचरित या 'रानी केतकी की कहानी" संवत् 1855 और 1860 के बीच लिखी होगी। उन्होंने चटकीली, मटकीली तथा मुहावरेदार भाषा में बड़े अच्छे ढंग से कहानी कही है। उन्होंने अपनी भाषा को अरबी, फारसी तथा ब्रजभाषा तथा अवधी से मुक्त रखने का प्रण किया, जिसको बहुत कुछ निर्वाह करने में सफल रहे।

3. लल्लूलाल जी — 1860 में उन्होंने कलकत्ते के फोर्ट विलियम कॉलेज के अध्यापक जॉन गिलक्राइस्ट की प्रेरणा से खड़ी बोली गद्य में 'प्रेमसागर' लिखा' जिसमें भागवत दशमस्कन्ध

की कथा कही गई है।

सदल मिश्र :-

उन्होंने "नासिकेतोपाख्यान" की रचना की। ये भी फोर्ट विलियम कॉलेज के थे। इन्होंने व्यवहारोपयोगी भाषा लिखने का प्रयत्न किया है और जहाँ तक हो सका है खड़ी बोली का ही व्यवहार किया है, पर इनकी भाषा भी साफ सुथरी नहीं है।

खड़ी बोली गद्य के प्रवर्तक इन चार लेखकों में किसी की भाषा को शुद्ध सुथरी नहीं पाते। किसी में पंडिताऊपन है तो किसी में फारसीपन। तब भी आधुनिक हिन्दी का पूरा पूरा आभास इंशा, सदासुखलाल और सदलमिश्र की भाषा में मिलता है। इन दोनों में भी मुंशी सदासुखलाल की भाषा अधिक महत्व की है। मुंशी सदासुख ने भी लेखनी भी चारों में पहले उठाई अतः गद्य का प्रवर्तन करने वालों में उनका विशेष स्थान समझना चाहिए।

इन लेखकों के बाद संवत् 1860 से 1915 के बीच का काल गद्य-रचना की दृष्टि से प्रायः शून्य ही मिलता है। संवत् 1914 के बलवे के पीछे ही हिन्दी गद्य साहित्य की परम्परा अच्छी तरह चली।

1915
1860
55

उसके पश्चात् ईसाई पादरियों ने अपने धर्म का प्रचार करने के निमित्त बाइबिल का अनुवाद शुद्ध खड़ी बोली

Scanned with CamScanner

में करवाया।

फिर राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द ने 'राजा भोज का सपना', 'वीरसिंह वृतान्त' आदि कोर्स की पुस्तकें तैयार करके खड़ी बोली के प्रचार में योग प्रदान किया।

खड़ी-बोली गद्य के विकास में राजा लक्ष्मणसिंह ने 'शकुन्तला नाटक' लिखा। खड़ी-बोली गद्य का विशुद्ध रूप 'शकुन्तला-नाटक' में देखने को मिलता है।

आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी खड़ी बोली के विकास में योगदान दिया। उन्होंने अपनी एक मात्र पुस्तक 'सत्यार्थ-प्रकाश' की रचना खड़ी-बोली गद्य में की।

उनके पश्चात् भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने खड़ी बोली गद्य के विकास में पूर्ण सहयोग दिया।

इस काल के बाद द्विवेदीयुग के कवियों में आध्यात्मिक उपाध्याय हरिऔध तथा पं. श्रीधर पाठक ने खड़ी बोली पद्य में काव्य रचना की, श्रीधर पाठक के 'एकान्तवास योगी' के बाद खड़ी बोली के 'श्रांत पथिक' (गोल्डस्मिथ के ट्रैवेलर का अनुवाद) निकली।

खड़ी बोली को परिष्कार तथा स्थिरता प्रदान करने वालों में महावीर प्रसाद द्विवेदी अग्रगण्य हैं। जिन्होंने मासिक पत्रिका 'सरस्वती' के सम्पादक तथा सम्पादकत्व में।

द्विवेदी युग के काव्य की मुख्य भाषा ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली बन गई। 'जयद्रथ-वध' की प्रसिद्धि ने ब्रजभाषा के मोह का वध कर दिया। 'भारत-भारती' की लोकप्रियता खड़ी बोली की विजय-भारती सिद्ध हुई।

वस्तुतः द्विवेदीयुगीन काव्य का विकास इस बात का इतिहास है कि खड़ी बोली अपरिपक्वता, अनगढ़ता और अमाधुर्य से किस भाँति परिपक्व अवस्था और माधुर्य तक पहुँची।

हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' तथा 'वैदेही-वनवास' की रचना खड़ी बोली में की।

द्विवेदी युग के मैथिलीशरण गुप्त का खड़ी बोली के स्वरूप-निर्धारण और विकास में इनका अन्यतम योगदान है। वास्तव में ये काव्योपयोगी रूप प्रदान करने वालों में से अग्रगण्य थे। यहाँ तक कि इनकी आरम्भिक रचना 'रंग-में-भंग' में भी खड़ी बोली का सरल-मधुर और प्रांजल रूप मिलता है।

इस काल में रामनरेश त्रिपाठी तथा लाला भगवानदीन ने खड़ी बोली में काव्य रचना की।

खड़ी बोली छायावाद युग में 'पल्लव' की भूमिका में पंत ने क्रान्ति मचा दी। अतएव खड़ी बोली पूर्णतः परिमार्जित होकर [illegible]

Scanned with CamScanner